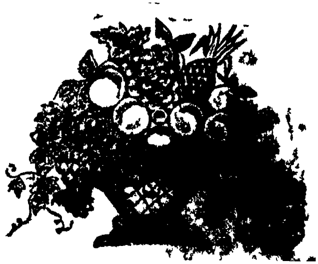
वर्ण आश्रम धर्म



रचयिता:—

श्री०पं० जनमेजय विद्यालंकार,
आयुर्वेदशास्त्री- वैद्यशिरोमणि।

प्रथमवार १०००, } १ जनवरी १९२५ { मूल्य -)॥

पुस्तक मिलने का पताः—

श्री० पं० जनमेजय विद्यालंकार,

आयुर्वेदशास्त्री—वैद्यशिरोमणि

जैनकुमार बिल्डिंग, नई सड़क, कानपुर। (यू० पी०)

वर्ण-आश्रम-धर्म ।

ब्रह्मचर्याश्रम ।

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद । शतपथ ।

बड़े ही सौभाग्यशाली हैं वे सन्तान कि जिन्हें उत्तम माता उत्तम पिता और उत्तम आचार्य मिले हों । जाति और देश का भविष्य वास्तव में बालकों पर अवलम्बित होता है, और बालकों का बनना बिगड़ना उनकी शिक्षा पर अवलम्बित है । जिस जाति के बालक सुशिक्षित और बलिष्ठ होते हैं, वह जाति संसार पर सदा शासन किया करती है, किन्तु जिस जाति के बालक अशिक्षित और दुर्बल होते हैं उस जाति का और देश का नाश हो जाता है । प्राचीन काल में भारतवर्ष में सब मनुष्य पढ़े लिखे विद्वान् होते थे और आज भी इङ्गलैण्ड तथा जर्मनी आदि में सौ में से सौ आदमी शिक्षित हैं । सब उन्नतियों का प्रथम आधार शिक्षा है । इस लिए प्रत्येक कार्य शिक्षा पर ही निर्भर है ।

अतः हम सब का कर्तव्य है कि ५ या ६ वर्ष की आयु में अवश्य अपनी सन्तानों को विद्यालयों में विद्या पढ़ने भेज दें। एक भी बालक व बालिका अशिक्षित न रहने पावे।

(प्रश्न) "स्त्री शूद्रौ नाधीयाताम् इति श्रुतेः" देखो यह श्रुति है कि स्त्री और शूद्र न पढ़ें, फिर तुम कैसे कहते हो कि सभी लड़के लड़कियों को पढ़ने भेज दें।

(उत्तर) चारों वेदों में कहीं भी यह वचन नहीं लिखा है। किसी महास्वार्थी मनुष्य ने ऐसा युक्ति शून्य वाक्य बनाकर श्रुति के नाम से लोगों को बहका दिया है, और लोगों में शिक्षा प्रचार को रोककर हिन्दू जाति के साथ भारी विद्रोह किया है। हिन्दू जाति की तमाम स्त्रियां अशिक्षिता और मूर्खा हो जावें, लगभग चौथाई पुरुष भी अशिक्षित और निरक्षर बने रहें, तथा हिन्दू जाति की उन्नति भी हो जावे, यह महाअसम्भव बात है। बस देश और जाति के हित के लिए सभी बालकों और बालिकाओं को उत्तम विद्या शिक्षा देनाही सच्चे देशहितैषियों का कर्तव्य है।

(प्रश्न) अच्छी बात है हम मानते है कि अन्य सब विद्याओं को सब लोग पढ़ें, परन्तु वेदों के पढ़ने का अधिकार तो शूद्रों को नहीं है देखिए "अथ हास्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां कर्णपूरणं उदाहरणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीर भेदः।

याम्" यह संस्कृत का वाक्य है कि अगर शूद्र वेद सुनले तो सीसा पिघलाकर उसके कानों में भरदो-यदि शूद्र वेदों का उच्चारण करे तो उसकी जीभ काटलो-और यदि वह वेदों को याद करले तो उसकी छाती चीर दो।

(उत्तर) ऐसे बेहूदे और राक्षसी वाक्यों पर हम लोगों को लज्जा और शोक होना चाहिए। भला मैक्समूलर आदि विदेशी और विधर्मी लोग तो वेदों के पण्डित होजावें और यह बेचारे राम कृष्ण को मानने वाले (शूद्र कहाने वाले) वेदों से वञ्चित रक्खे जावें यह कहां का न्याय है। सच तो यह है कि ऐसे २ राक्षसी नियम बनाकर ही यदि कुछेक स्वार्थी लोग तमाम जनता को मूर्ख न बना देते तो अपने ढोंगों के द्वारा लोगों को लूटते कैसे। ऐसे ही नियमों के द्वारा वेदों से वञ्चित रहकर हमारी जाति के सैकड़ों हज़ारों नररत्न क्रमशः ईसाई और मुसलमान हो गए हैं। ऐसे ही राक्षसी नियमों के डर से आज अनेक अछूत कहाने वाले सज्जन हिन्दूराज्य के विरोधी बन गए हैं। इस प्रकार के घृणित और परस्पर लड़ाई पैदा कराने वाले वाक्यों की जितनी निन्दा की जावे, उतनी ही थोड़ी है। ऐसे वाक्य लिखने वालों को हिन्दूजाति का शत्रु समझना चाहिए।

देखिए, "यथेमां वाचं कल्याणी मावदानि जनेभ्यः, ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय" यजु. अ २६,

यह यजुर्वेद का मंत्र है। परमात्मा आज्ञा देते हैं कि "यह वेद मेरी वाणी है, इनको पढ़ने सुनने और धारण करने का अधिकार ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र-अतिशूद्र-स्त्री-आदि सबको अर्थात्-मनुष्यमात्र को है" बस परमात्मा की आज्ञा के विरुद्ध किसी मनुष्य की बात कभी नहीं मानी जासकती। इसलिए आर्यमात्र (हिन्दू जाति) का परम कर्तव्य है कि छोटी ही उमर से अपने २ बालकों और बालिकाओं की शिक्षा का सुप्रबन्ध करें। यह राजनियम अथवा हिन्दूमहा-सभा का नियम होना चाहिए कि प्रत्येक मनुष्य अपनी सन्तानों को विद्या और शिक्षा के लिए गुरुकुलों ऋषिकुलों विद्यालयों स्कूलों और पाठशालाओं में ७ वर्ष की आयुतक अवश्य भेज दे। जो न भेजे उसे दण्ड मिलना चाहिए और जो कोई विद्या प्रचार का विरोध करे उसे भी दण्ड मिलना चाहिए।

इन शिक्षणालयों में हिन्दी संस्कृत गणित पदार्थ विद्या चिकित्सा ज्योतिष अर्थशास्त्र धर्मशास्त्र आदि २ सब प्राचीन और नवीन विद्यायें तथा षड्दर्शन और चारों वेदों की शिक्षा अवश्य मिलनी चाहिए। सब विद्यार्थी इकट्ठे ही रहें, इकट्ठे ही लिखें पढ़ें, और इकट्ठे ही भोजन आदि करें। वेदों का पढ़ना प्रत्येक विद्यार्थी के लिए आवश्यक होना चाहिए, उनके

भोजन वस्त्र निवासस्थान आदि में कोई न्यूनता व अधिकता न हो, तथा अन्य कोई भी भेद उनमें न रखा जावे, सबके साथ समान वर्ताव होना चाहिए। सभी बालकों को यथा शक्ति विद्वान् सुशील बलिष्ठ तेजस्वी तपस्वी और सभ्य होना चाहिए, और आचार्य आदि का यह परम धर्म है कि वे यथाशक्ति सभी बालकों को सुयोग्य विद्यावान् और बलवान् बनावें।

(प्रश्न) ऐसे तो छूत अछूत का भेद ही न रहेगा। सब लड़के इकट्ठे रहेंगे, इकट्ठे खायेंगे पियेंगे तो ऊंची जात वाले भी अछूत हो जावेंगे। और जो सभी लड़के वेद शास्त्र पढ़ जावेंगे तो जूते गांठना टट्टी साफ़ करना आदि सेवा का काम कौन करेगा।

(उत्तर) नहीं भाई ऐसी चिन्ता न करो, अछूतों को छूलेने से ऊंची जात वाले ही क्यों अपवित्र हो जावेंगे शायद ऊंची जात वालों को छूलेने से अछूत ही पवित्र हो जाते हों। यदि ऊंची जात वाले अछूतों को छूकर भी उन्हें पवित्र नहीं कर सकते, किन्तु स्वयं अछूत हो जाते हैं तो उनका ऊंचापन व बड़प्पन ही किस काम का। देखो असली बात तो यह है कि "जन्मना जायते शूद्रः" अर्थात् जन्म से सभी लड़के शूद्र अनपढ़ तथा समान ही पैदा होते हैं। सो यह समझो कि चाहे किसी भी जात का लड़का हो वह जन्म से शूद्र ही होता है, इसलिए

जब सभी लड़के समान होते हैं तो किसी के छूने से या साथ में खालेने से कोई ऊंचा नीचा नहीं हो जावेगा। ब्राह्मण क्षत्रिय आदि तो मनुष्य तब बनता है जब वह ब्रह्मचर्याश्रम समाप्त करके गृहस्थाश्रम में आता है, इससे पहिले अपने कुल के कारण कोई लड़का ब्राह्मण व शूद्र नहीं होता। इसलिए विद्यालयों में सब लड़कों को सदा इकट्ठे रहना तथा इकट्ठे ही खाना पीना चाहिए।

आपका दूसरा भय कि "सेवा का काम कौन करेगा" भी निर्मूल है। क्योंकि पढ़ाये जाने पर भी अनेक लड़के विद्वान् नहीं होने पाते। उनकी बुद्धि इतनी खराब होती है कि पढ़ाने वाला हार जाय पर वह कुछ नहीं समझ पाते। सो जो ऐसे अनपढ़ अशिक्षित मूर्ख रह जा ँ तथा अन्य कोई दिमागी काम न कर सकते हों उन्हें ही सेवा का काम करना होगा। चाहे वह ऊंची जात वालों की सन्तान हों चाहे [illegible] वालों की। यही वास्तव में न्याय है, यही इन्साफ़ है। भला यह कहां का न्याय है कि एक समाज के समाज को शूद्र अस्पृश्य आदि कहकर छोड़ दिया जावे, उनके लिए विद्या के तथा उन्नति के सब मार्ग बन्द कर दिए जावें और जबरदस्ती उनसे और उनकी सन्तानों से गुलामों की तरह व्यवहार किया जावे।

देखिए महाराज श्रीकृष्ण और सुदामा इकट्ठे पढ़ते थे, द्रोण और द्रुपद इकट्ठे पढ़ते थे, आजकल भी शिक्षित देशों

में इकट्ठे ही पढ़ने की प्रथा है। इसलिए देश और जाति के हितैषी महानुभावों को चाहिए कि वे तमाम जाति में "वाधित शिक्षा" का प्रबन्ध करें। वर्तमान हिन्दूजाति के अन्दर फैली हुई सैकड़ों कुरीतियों को जड़ से काटने के लिए शिक्षा और विद्या का प्रचार ही परमोत्तम है। जब जाति के बालक विद्वान् होजावेंगे तो कोई भी स्वार्थी उन्हें बहका कर ठग नहीं सकेगा, जब वे बलिष्ठ होजावेंगे तो कोई भी अत्याचारी मनुष्य उनपर आक्रमण नहीं करसकेगा। अतः आर्य जाति के प्रत्येक बालक को कमसे कम २५ वर्ष की आयुतक और प्रत्येक बालिका को कमसे कम १६ वर्ष की आयुतक सदाचार ब्रह्मचर्यपूर्वक जितेन्द्रिय रहकर विद्याशिक्षा और बल की प्राप्ति और वृद्धि अवश्य करनी चाहिए। यदि हमारी आर्य-जाति में यह ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याप्राप्ति की प्राचीन प्रथा फिर से जागृत होजावे तो हमें अपना परम सौभाग्य समझना चाहिए।

* गृहस्थाश्रम *

हम ऊपर लिख चुके हैं कि जन्म से कोई छोटा बड़ा नहीं हो सकता—ब्रह्मचर्याश्रम में सब लड़के समान होते हैं उनमें कोई बालक ब्राह्मण या क्षत्रिय आदि नहीं होता। विद्या पढ़ने के पश्चात् अपने २ कर्मों के अनुसार सब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य व शूद्र कहाते हैं। गृहस्थाश्रम में यह चारों भेद होते हैं। (प्रश्न) यदि गुणकर्म से वर्णव्यवस्था है तो सभी अपने को

सदाचारी और विद्वान् कहने लगेंगे और सभी ब्राह्मण होना चाहेंगे।

(उत्तर) ऐसा नहीं हो सकता। यह गुरू का काम है कि २५ वर्ष तक अपने शिष्यों के गुण कर्म स्वभाव को भली प्रकार देखकर तथा, भविष्य में वह शिष्य लोग किस२ उपाय से अपनी२ आजीविका करेंगे, इन सब बातों को जानकर अपने शिष्यों को ब्राह्मण क्षत्रिय आदि की पदवी से संयुक्त करें। जब यह पदवी देना आचार्य के हाथ में रहेगा तब कभी जबरदस्ती कोई ब्राह्मण या क्षत्रिय नहीं बन सकेगा और न ही कोई ब्राह्मणत्व व क्षत्रियत्व आदि को अपनी पैतृक सम्पत्ति समझ सकेगा। देखो प्राचीन शास्त्रकारों की भी यही आज्ञा है।

आचार्यस्त्वस्ययां जातिं विधिवद्वेदपारगः
उत्पादयति सावित्र्या सा सत्या साऽजराऽमरा

मनु २—१४८

सम्पूर्ण वेदों का ज्ञाता आचार्य वेदादि सम्पूर्ण शिक्षा देने के पश्चात् अपने शिष्य को भजाति बनाता है वही उसकी असली जाति होती है, और वजेनीह अजरामर होती है। यह मनु महाराज का आदेश है। वास्तव में असली वर्ण तभी होता है जब विद्या समाप्ति के पश्चात् अपने शिष्य के गुणकर्म स्वभाव को जानने वाला आचार्य उसको वर्ण देता है।

(प्रश्न) परन्तु आजकल तो ऐसे आचार्य मिलना कठिन है। और यदि कोई आचार्य अपने शिष्य का वर्ण नियत भी करे तो जनता उसे मानने को तैयार नहीं होती। फिर यह गुणकर्मानुसार वर्णव्यवस्था कैसे चलेगी।

(उत्तर) यह सत्य है कि सम्पूर्ण वेदों के ज्ञाता आचार्य आज कल बहुत दुर्लभ हैं परन्तु सत्य परायण न्यायप्रिय पक्षपातरहित अनेक विद्वान् सज्जन हमारी जाति में मौजूद हैं, वही सबके गुणकर्म देखकर वर्ण का निश्चय कर सकते हैं। अथवा तमाम जनता को यह अधिकार है कि वह जिस२ व्यक्ति के गुणकर्म स्वभाव जिस जिस प्रकार के देखे उसे वही वही वर्ण देवे और उसी उसी वर्ण में उसको गिने।

(प्रश्न) गुण कर्म स्वभाव शब्दों के क्या अर्थ हैं।

(उत्तर) गुण (Qualifications, specialities, ability) और कर्म (Actions, deeds, works, Profession) दोनों के अर्थ तो सभी जानते हैं और स्वभाव का अर्थ आदत (Nature, Habit) है।

(प्रश्न) कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं कि स्वभाव का अर्थ "अपना जन्म" है।

(उत्तर) स्वभाव शब्द का अर्थ आदत ही ठीक है और यही सङ्गत भी है। अगर प्राचीन शास्त्रकारों को वर्ण व्यवस्था में जन्म का भीकुछ भाग रखना अ होता तो वह साफ़ तौर से जन्म शब्द लिख सकते

थ, यह न लिखकर स्वभाव लिखा है अतः स्वभाव शब्द का लोक प्रसिद्ध अर्थ आदतही ठीक है। फिर "अपना जन्म" यह बात ही निरर्थक और फिजूल है। क्या एकही आदमी का जन्म अपना और पराया भी हो सकता है। राम का जन्म उसी का होता है दूसरे का नहीं, फिर राम का अपना जन्म कैसा। और फिर शास्त्र में तो "जन्मना जायते शूद्रः" इत्यादि वाक्यों से यह बात साफ़ लिखी है कि जन्म से सभी शूद्र तथा सभी समान होते हैं। जब जन्म से सभी एक हैं तो उसके गिनने की कोई भी आवश्यकता नहीं। और फिर शास्त्र में तो साफ़ २ लिखा है कि वर्णव्यवस्था में जन्म का कोई भी स्थान नहीं है देखो—

कारणंहि द्विजत्वे च वृत्तमेव न संशयः। महा. वन. ३१२ अ.
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्। महा. शा. १८९ अ.
सत्यं तपो दमो दानं अहिंसा धर्म नित्यता
साधकानि सदा पुंसां न जातिर्न कुलं तथा। महा. वन १८१.

यह महाभारत के वाक्य हैं, इनके अर्थ हैं कि "ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य होने के लिए सदाचार ही आवश्यक कारण है जन्म नहीं" तथा "परमात्मा ने सबको एकसा ही बनाया है परन्तु अपने २ कर्मों से लोग ब्राह्मण व शूद्र बने हैं जन्म से नहीं" और "सत्य तप दान धर्म युक्तता इन्हीं से आदमी बनता

है जन्म से नहीं। जब शास्त्र सहस्रमुख से कहता है कि वर्ण-व्यवस्था में जन्म का कोई स्थान नहीं तब जो लोग स्वभाव शब्द का अर्थ "अपना जन्म" करते हैं वह भारी भूल करते हैं। जिनमें बुद्धि व विद्या द्वारा उन्नति करने का सामर्थ्य नहीं है वही प्रायः जन्म की आड़ लेने के लिए ऐसी २ युक्ति शून्य बातें किया करते हैं। इसलिए गुणकर्म और स्वभाव अर्थात् आदत को देखकर ही मनुष्यों के वर्ण का निश्चय धार्मिक पक्षपात रहित विद्वान् पुरुषों को करना चाहिए।

(प्रश्न) किन २ गुणों को देखकर आचार्य विद्वान् लोग अथवा जनता, लोगों को ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र का पद देवें।

(उत्तर) अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा
दानं प्रतिग्रहश्चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्। मनु १-८
शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्मस्वभावजम्। भगवद्गीता

पढ़ना पढ़ाना, यज्ञ करवाना यज्ञ करना, और दान देना ये कर्म जिन लोगों में हों उन्हें ब्राह्मण समझना चाहिए। "प्रतिग्रहः प्रत्यवरः" मनु। लेना ब्राह्मण के लिए बहुत नीच कर्म है। इसी प्रकार दसों इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना, तपस्या, पवित्रता, शान्ति, सरलता, ज्ञान, विद्या, बुद्धि, ईश्वर विश्वास यह गुण जिन लोगों में हों उन्हींको ब्राह्मण कहना और मानना।

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्यायनमेव च
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः । मनु १-८९
शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रकर्मस्वभावजम् । गीता

भली प्रकार प्रजा की रक्षा और पालन करना अर्थात् धर्म से सब राष्ट्र पर शासन करना, दान देना, सब विद्याओं को पढ़ना, यज्ञ करना, कभी किसी व्यसन में न फंसना, यह कर्म जिनमें हों उनको क्षत्रिय समझना।

पशूनां रक्षणं दान मिज्याध्यायनमेव च
वणिक् पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च । मनु १-९०

गो घोड़ा हाथी आदि पशुओं को पालना और बढ़ाना, दान देना, यज्ञ करना, पढ़ना, दुकानदारी, व्यापार, वाणिज्य, व्यवहार, रूपये का लेन देन करना यह गुण कर्म जिनमें हों उन्हें वैश्य कहना चाहिए।

एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया । मनु १-९१

पूर्वोक्त तीनों वर्णों की सेवा सच्चाई के साथ करना शूद्र का काम है, अर्थात् जो लोग विद्या आदि न पढ़ सकने के कारण अज्ञानी और मूर्ख रह गए हों तथा अन्य कुछ काम न कर सकते हों वह अपने शारीरिक श्रम (Unskilled Labour) द्वारा जनता की सेवा करें। शास्त्रीय परिभाषा

में ऐसे लोगों को शूद्र कहते हैं। यह संक्षेप से ब्राह्मण आदि होने के लिए आवश्यक गुणकर्म लिखे। जिस पुरुष में जैसे २ गुणकर्म हों उसी के अनुसार उसे वर्ण देना आचार्य, राजा, विद्वान् महानुभावों, अथवा सामान्य जनता का काम है। ऐसी व्यवस्था रखने से सब मनुष्य सदा उन्नति शील रहते हैं। क्योंकि सबको यह भय रहेगा कि जो हमारी सन्तानें मूर्ख होंगी तो शूद्र गिनी जावेंगी, और उन्हें द्विजों की सेवा शारीरिक परिश्रम द्वारा करनी पड़ेगी। और जो मूर्ख होने से शूद्र होगये हैं उनको सदा उत्साह बना रहेगा कि विद्या आदि शुभ गुणकर्म प्राप्त करके हम भी द्विज बन सकते हैं।

(प्रश्न) इस व्यवस्था से तो वेद शास्त्र पढ़कर चमार और भंगियों की सन्तानें भी ब्राह्मण बन सकेंगी, ऐसा तो पहिले कभी नहीं हुआ। और यह भी बताओ कि क्या जिसके माता पिता ब्राह्मण ब्राह्मणी हों वही ब्राह्मण होता है कि जिसके माता पिता अन्य वर्णस्थ हों वह भी ब्राह्मण हो सकता है।

(उत्तर) चाहे किसी की भी सन्तान क्यों न हो, जो भी उत्तम गुणकर्म युक्त विद्वान् सदाचारी होगा वह ब्राह्मण कहलायेगा। यदि सचमुच चमार व भंगी आदि अपने सन्तानों को विद्वान् और सदाचारी बनावें तो वह सन्तानें अवश्यमेव ब्राह्मण हो सकती

हैं। देखो जावाल ऋषि जिनके माता पिता के वर्ण का कुछ भी पता नहीं है वह ब्राह्मण होगए हैं। विश्वामित्र क्षत्रियों की सन्तान थे पर अपने कर्मों से ब्राह्मण बन गए। महर्षि मांतग चाण्डाल कुलमें पैदा हुए थे पर शुभ कर्म करने से से ब्राह्मण और ऋषि होगए। राजा वीतहव्य क्षत्रिय कुल में पैदा होकर कर्मों से ब्राह्मण बन गए। महर्षि व्यास एक मल्लाह की लड़की से पैदा हुए थे पर अपने शुभ कर्मों से ब्राह्मण और महर्षि होगए।

(प्रश्न) भला जो ब्राह्मण ब्राह्मणी के वीर्य और रज से शरीर ॥ हैं वह बदल कर दूसरे वर्ण का कैसे हो कता हैं।

(उत्तर) रज वीर्य के योग से हड्डी मांस वसा मज्जा आदि का शरीर तो पैदा हो सकता है परन्तु ब्राह्मणपन या क्षत्रियपन उसमें रज वीर्य से नहीं आता किन्तु-

स्वाध्योयन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः

महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः। मनु २-२८

लिखने पढ़ने से, ब्रह्मचर्य आदि के करने से, यज्ञ करने व करवाने से, धर्म से प्रजोत्पत्ति करने से तथा न्यायप्रिय सदाचारी धार्मिक बनने से यह मनुष्यमात्र का शरीर ब्राह्मण बनता है। यह मनु महाराज का कथन है।

(उत्तर) भला अब सब शास्त्रों में वर्ण व्यवस्था गुणकर्म-

नुसार है तो हमारे पूर्वज क्या मूर्ख थे कि जो शास्त्रों की व्यवस्था को न मानकर मनमाना जन्म से मान बैठे। ऐसा सनातन से जन्म से ही वर्णव्यवस्था मानी जाती रही है।

) हरगिज़ नहीं। न तो हमारे तुम्हारे पूर्वज ही मूर्ख थे और न [illegible] प्रबन्ध। सनातन [illegible] यह तो बिल[illegible] पीढ़ी पुरानी है। उससे पहिले पुराने सनातन काल से तो वर्णव्यवस्था गुणकर्मानुसार थी। [illegible] पहिले [illegible] थे और तदनुसार [illegible] ब्राह्मण [illegible] इसलिए [illegible] गांठ [illegible] कता था। परन्तु यह प्रथा [illegible] बन्द हो गया, [illegible] की [illegible] का [illegible] न रहा, तब जिसने जैसा चाहा वैसाही जनता को बहका दिया, और अपढ़ लोगों ने वैसा ही मान लिया। कुछ लोगों ने इस ब्राह्मणत्व क्षत्रियत्व आदि को अपनी पैतृक सम्पत्ति बना लिया, और ऐसा नियम कर दिया कि अमुक २ मनुष्य के कुल में जितनी भी सन्तानें पैदा होंगी, वह सब की सब ब्राह्मण व शूद्र आदि समझी जावेंगी। इस बनावटी नियम का असर यह हुआ कि किसी किसी

के यहां तो लड़कों पोतों और पड़पोतों के लिए भी घर बैठे बैठाये, बिना कुछ लिखे पढ़े, और बिना कुछ काम किए ही मौज में रोटियों का बन्दोबस्त पक्का होगया, और कुछ लोगों के लिए उन्नति करने के सब रास्ते बन्द कर दिए गए। इस घोर अन्याय का कुपरिणाम यह हुआ कि हमारी उन्नत जाति घोर अविद्या के अन्धकार में पड़ गई और असंख्य दुःखों का शिकार बनी।

जिस देश में ऐसा घोर अन्याय होता हो उस देश में अकालों का पड़ना, मौतें, पराधीनता का होना स्वाभाविक। शोक तो यह है कि हमारा देश भी इन्हीं आफ़तों में फंस गया।

यह सब लोग बहकाने में क्यों आगए? सिर्फ अविद्वान् होने से। यदि स्वयं शास्त्रों को पढ़ते तो उलटी बातें करने वालों के जाल में कभी न फंसते। आज भी यदि किसी प्रकार तमाम आर्य सन्तान संस्कृत पढ़ कर विद्वान् हो जावें तथा शास्त्रों और वेदों को स्वयं पढ़ लें तो यह जन्म की वर्णव्यवस्था मानना, छुआछूत, और छोटे बड़े के बनावटी भेद तथा अन्य सब बुराइयां और कुप्रथायें क्षण भर में जड़ से नष्ट हो जायें।

(प्रश्न) पुराणों, स्मृतियों तथा अन्य सच्छास्त्र और वेदों के प्रमाणों से क्या आप सिद्ध कर सकते हैं कि वर्ण व्यवस्था गुण कर्मानुसार होती और जन्म से नहीं।

(उत्तर) हां अवश्य । वेदों, शास्त्रों, स्मृतियों और पुराणों में सैकड़ों प्रमाण हैं । परमात्मा की और सब प्राचीन विद्वानों की सम्मति में वर्णव्यवस्था गुणकर्म से ही मानी गई है, जन्म से नहीं । अच्छा अब आप प्रमाण सुनिए ।

(१) सत्यं दानं क्षमा शील मानृशंस्यं तपो घृणा ।
दृश्यन्ते यत्र नागेन्द्र स ब्राह्मण इति स्मृतः ॥
महा० वन० १८० अ० ॥

सच्चाई, दान, क्षमा, सुशीलता, मृदुता, तप, दया, यह गुण जिन लोगों में हों उनको ब्राह्मण कहना और मानना, अन्य को नहीं । यह महाभारत में लिखा है ।

(२) तावच्छूद्रसमो ह्येषो यावद्वेदे न जायते ।
महा० वन० १८० अ० ॥

जब तक मनुष्य वेद नहीं पढ़ता तब तक वह शूद्र ही रहता है । यह भी महाभारत में लिखा है ।

(३) न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममयं जगत् ।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम् ॥
महा० शान्ति १८९ अ०

चारों वर्णों में कोई भेद नहीं है, सभी के भीतर परमात्मा व्याप्त है, परमात्मा ने ही सब को बनाया है। जो जैसे २ कर्म करता है वैसा २ वर्ण पाता है, वर्ण कर्मों के द्वारा पाता है जन्म के द्वारा नहीं। यह भी महाभारत में लिखा है।

(४) हिंसानृतप्रिया: लुब्धा: सर्वकर्मोपजीविन:।
कृष्णा: शौचपरिभ्रष्टास्ते द्विजा: शूद्रतां गता: ॥
महा० शान्ति १८६ अ० ॥

हिंसा [illegible] झूठ, लालच, अपवित्रता आदि दुर्गुणों के होने से, [illegible] होने से, और अपनी रोटी प्राप्ति के लिये [illegible] कर डालने से, अनेकों ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य लोग शूद्र बन गए हैं यह भी महाभारत में लिखा है।

(५) न वै शूद्रो भवेच्छूद्रो ब्राह्मणो ब्राह्मणो न च।
महा० शान्ति १८६ अ०।

शूद्र की सन्तान शूद्र ही हों और ब्राह्मण की सन्तान ब्राह्मण ही हों यह कोई जरूरी बात नहीं है किन्तु बदल भी सकते हैं। यह भी महाभारत में लिखा है।

(६) राजन् कुलेन वृत्तेन स्वाध्यायेन श्रुतेन वा,
ब्राह्मण्यं केन भवति ब्रूहि मे तत्सुनिश्चितम्।
शृणु यक्ष कुलं तात न स्वाध्यायो न श्रुतम्,

कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु केवलम्॥

महा० उद्योग १८० अ०

प्रश्न है कि जन्म, कुल स्वाध्याय विद्या और सदाचार में से किससे आदमी ब्राह्मण होता है। उत्तर यह है कि जन्म से या कुल से कोई ब्राह्मण नहीं होता और न ही किसी और कारण से होता है, केवल सदाचार से आदमी ब्राह्मण होता है। यह भी महाभारत का वचन है।

(७) शूद्रोऽप्यागम सम्पन्नो द्विजो भवति संस्कृतः,
ब्राह्मणो वाप्यसद्वृत्तः सर्वसंकर भोजनः।
स ब्राह्मण्यं समुत्सृज्य शूद्रो भवति तादृशः॥

ब्रह्मपुराण २२३ अ०

विद्या पढ़ कर और सदाचारी हो कर शूद्र का पुत्र भी ब्राह्मण हो जाता है, और इसी प्रकार विद्या और सदाचार छोड़ देने से अभक्ष्य मांस आदि अन्य पदार्थों के सेवन करने से ब्राह्मण का पुत्र भी शूद्र हो जाता है। यह ब्रह्मपुराण में लिखा है।

(८) शूद्रोऽपि द्विजवत्सेव्य स्वयं ब्रह्माब्रवीदिदम्।

ब्रह्मपुराण अ० २२३

स्वयं ब्रह्मा ने कहा है कि सदाचारी होने से शूद्र भी ब्राह्मण होता है और ब्राह्मण की तरह पूजनीय होता है। यह भी ब्रह्मपुराण का वचन है।

(९) कर्मणा क्षत्रियत्वं च वैश्यत्वं च स्वकर्मणा ।
दे० भा० स्कं० ९ अ० २८

क्षत्रिय और वैश्य भी कर्म से होते हैं जन्म से नहीं । यह देवी भागवत पुराण में लिखा है ।

(१०) न जात्या ब्राह्मणश्चात्र क्षत्रियो वैश्य एव न ।
न शूद्रो नापि वै म्लेच्छो भेदिताः गुणकर्मभिः ॥
शंकरनीति

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और म्लेच्छ अपने जन्म से कभी कोई नहीं होता । किन्तु "गुणकर्मभिः" अर्थात् गुणकर्मानुसार लोग ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र व म्लेच्छ हुआ करते हैं । यह शंकरनीति की व्यवस्था है ।

(११) जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते ।
वेदाभ्यासाद् भवेद्विप्रो ब्रह्मजानाति ब्राह्मणः ॥

जन्म से सभी शूद्र पैदा होते हैं, परन्तु पीछे से संस्कार वेदाभ्यास और ब्रह्मज्ञान के द्वारा मनुष्यक्रमशः द्विज विप्र और ब्राह्मण बनता है ।

(१२) धर्मेणाधिगतो यैस्तु वेदः सपरि बृंहणः ।
ते शिष्टाः ब्राह्मणा ज्ञेयाः श्रुतिप्रत्यक्षहेतवः । मनु १२,१०९

जिन्होंने धर्माचरण पूर्वक वेद का अध्ययन किया है वे ही सदाचारी पुरुष ब्राह्मण कहाते हैं और कोई अन्य नहीं । यह मनु महाराज की आज्ञा है ।

(१३) शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्,
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च। मनु १०, ६५

अच्छे काम करने तथा पढ़ने से शूद्र कुलोत्पन्न पुरुष भी ब्राह्मण होसकता है और बुरे काम करने तथा विद्या आदि को न पढ़ने से ब्राह्मण कुलोत्पन्न पुरुष भी शूद्र होजाता है। इसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्यों को भी जानलेना। अर्थात् पुरुष चाहे किसी भी कुल में पैदा हुआ हो वह जिस २ वर्ण के अनुकूल काम करता है उसे उसी वर्ण में गिनना और मानना चाहिए। यह भी मनु महाराज की आज्ञा है।

(१४) अधर्मचर्यया पूर्वो २ वर्णो जघन्यं-
जघन्यं वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ।
धर्मचर्यया जघन्यो वर्णः पूर्वं पूर्वं-
वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ।

आपस्तम्ब सूत्रग्रन्थ

अधर्म का आचारण करने से ऊंचे कुल में पैदा होने वाले भी नीचे २ वर्ण के हो जाते हैं, और वह उसी वर्ण में गिने जावें जिसके कि वे योग्य हों। इसी प्रकार उत्तम और धर्माचरण द्वारा शूद्र आदि कुल में पैदा होने वाले भी ब्राह्मण आदि ऊंचे वर्ण को पा सकते हैं, और अपने योग्य वर्ण ही में गिने जावें। यह महर्षि आपस्तम्ब की आ :
हम कितने प्रमाण दें। शास्त्रों में इसके लिए हज़ारों

प्रमाण भरे पड़े हैं, पर वह सभी इस छोटी सी पुस्तक में नहीं लिखे जा सकते-इस लिए अब वेद का एक मन्त्र देकर हम इस विषय को समाप्त करेंगे।

(१५) ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ॥
यजुर्वेद ३१-११

इस सृष्टि में जो लोग मुख स्थानीय हैं अर्थात् जो ज्ञान प्रधान धर्मात्मा और दिमाग़ी काम करते हैं वह ब्राह्मण हैं। जिनमें बहुत बहादुरी और बल है वह क्षत्रिय हैं। जिनमें देसदेशान्तरों में आने जाने और व्यापार वाणिज्य करने की शक्ति है वह वैश्य हैं। और जो मूर्ख हैं तथा केवल शारीरिक-श्रम (Unskilled Labour) ही कर सकते हैं, वह शूद्र हैं। यह वेद भगवान् की आज्ञा है। वेद की साफ़ आज्ञा है कि वर्णव्यवस्था गुण कर्म से है, जन्म से नहीं।

(प्रश्न) बेशक यह सब बिलकुल ठीक है। अब यह बताओ कि ये जो अग्रवाल, चौहान, राजपूत, चौबे, तिवारी, कायस्थ, दुबे, खत्री, गड़रिये, खटीक, धानुक, कोरी आदि सहस्रों लोक प्रचलित जातियां हैं, इनको किस २ वर्ण में गिना जावे।

(उत्तर) वेद की आज्ञा के अनुसार ही व्यवस्था होना ठीक है। इन सभी जातियों में जो २ मनुष्य दिमाग़ी

काम करने वाले, विद्यावान् और सदाचारी हों, उन २ मनुष्यों को ब्राह्मण मानना। जो बहादुर योद्धा हों उन उन मनुष्यों को क्षत्रिय समझना। जो किसी [illegible] व्यापार तथा दुकानदारी आदि द्वारा अपना और अपने देश का धन बढ़ाने में लगे हों उन २ आदमियों को वैश्य समझना। इसी प्रकार जो लोग अपने प्रकार के अन (Unskilled Labour) तथा कुली [illegible] करें, मट्टी ढोना इत्यादि, द्वारा ही जनता की सेवा करते हों उन्हें शूद्र [illegible]।

[illegible] वर्णों [illegible] [illegible] कदापि [illegible] [illegible] कोई [illegible] नहीं। [illegible] को [illegible] है। कोई अछूत नहीं है सभी को छूना चाहिए। किसी से घृणा करना महापाप है। सब स्कूलों पर पढ़ने का सब को अधिकार है। सब कुओं पर चढ़ने का सब को अधिकार है। सब मन्दिरों में जाने तथा वहां पूजा पाठ दर्शन आदि करने का सब को अधिकार है। वेद पढ़ने यज्ञ हवन करने का सब को अधिकार है। किसी के छू लेने से रोटी और पानी भ्रष्ट नहीं हो जाता।

खाना पीना चारों वर्णों का इकट्ठे होना चाहिए। शूद्र के साथ बैठ कर खाने व उसके हाथ का भोजन व जल खाने पीने से कोई शूद्र नहीं हो जाता है। हां परोसने वाले को पहिले मिट्टी से हाथ पैर आदि धो कर अवश्य साफ़ हो जाना चाहिए।

अवश्यं भरणीयो हि वर्णानां शूद्र उच्यते।
महा० शान्ति पर्व

ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वश्यों को चाहिए कि शूद्रों (केवल शारीरिक श्रम कुलीगीरी आदि करने वालों) के लिए जीविका का उत्तम प्रबन्ध करें। उनको वेतन अच्छा मिलना चाहिए ताकि वह और उनका परिवार आनन्द से खा पी सकें। क्योंकि अन्य लोग तो तरह २ के अन्य काम भी कर सकते हैं पर निर्बुद्धि होने से जो शूद्र है वह बेचारा और कौन काम करेगा। अतः द्विजों का परम कर्तव्य है कि अपने सेवकों की रक्षा और पालन का पूरा प्रबन्ध करें।

यह वर्णव्यवस्था वैदिक है। गृहस्थाश्रम में सभी लोग इन चारों वर्णों में से ही किसी के अनुसार अपनी जीविका का प्रबन्ध करते हैं।

(प्रश्न) गृहस्थाश्रम में विवाह का क्या नियम है।

(उत्तर) इसी व्यवस्था के अनुसार ही यथाशक्ति सवर्ण विवाह ही करना चाहिए, अर्थात् जिस विवाह में वर और कन्या के गुणकर्म स्वभाव बिलकुल ठीक मिलते हों उसे सवर्ण विवाह और उत्तम विवाह समझना चाहिए, चाहे प्रचलित जात पात की प्रथा से वर और कन्या किसी भी जात के क्यों न हों। और यदि प्रचलित बिरादरी व जात पात के अनुसार ही विवाह हो किन्तु दोनों के गुणकर्म स्वभाव न मिलते हों तो उसे असवर्ण विवाह समझना चाहिए और वह शास्त्रीय दृष्टि से निन्दनीय है। वर और कन्या की बिरादरियों और जातों में लौकिक दृष्टि से चाहे कितना भी ऊंच नीच और भेद रहे किन्तु यदि उन दोनों के गुणकर्म स्वभाव एक से हैं तो वेदों की आज्ञानुसार वह एक ही वर्ण के हैं और उन्हीं का विवाह होना अत्युत्तम है। कन्या को १६ वर्ष और वर को २५ वर्ष की आयु से पूर्व विवाह कभी न करना चाहिए।

गृहस्थाश्रम को भोग विलास का आश्रम नहीं समझना चाहिए। गृहस्थाश्रम सब आश्रमों से श्रेष्ठ तथा महान् है। यह अत्यन्त पवित्र आश्रम है। सन्तानोत्पत्ति द्वारा मनुष्य

को अपने एक परमावश्यक और पवित्र कर्तव्य का पालन इसी आश्रम में करना होता है।

स्त्री और पुरुष को चाहिए कि सदा अत्यन्त प्रेम से रहें। जिस कुल में स्त्री और पुरुष दोनों की सम्मति सदा एकसी रहती है, विचार एक से होते हैं, दिल समान होता है, तथा इच्छायें और रुचि समान रहती हैं, वहां सदा कल्याण होता है और वह कुल सदाही खूब फलता फूलता है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः
अपूजित स्तु यत्रैताः सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः। मनु. अ. ३
शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।
न शोचन्ति तु यत्रैताः वर्धते तद्धि सर्वदा। मनु. अ. ३

यह मनुस्मृति के श्लोक हैं। "जहां स्त्रियों का सम्मान होता है, वहां देवता निवास करते हैं, और जहां उनका अपमान होता है वहां सभी काम विफल होते हैं"। जिस कुल जाति व देश में अपमानित और दुःखी होकर स्त्रियां रोती हैं, उस कुल जाति और देश का शीघ्र ही सत्यानाश हो जाता है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं"। पाठकगण देखें कि स्त्रियों की स्थिति वैदिक गृहस्थाश्रम में कितनी ऊंची और कितनी पवित्र मानी गई है। परन्तु इस प्रकार के आदर्श वैदिक श्लोकों के स्थान में जब से अनेक गन्दे स्वार्थयुक्त और अवैदिक

वाक्यों का प्रचार होगया, (जैसे स्त्री शूद्रौनाधीयाताम्-ढोल गंवार शूद्र पशु नारी ये सब ताड़न के अधिकारी-आदि) तभी से आर्यजाति के गृहस्थाश्रम की प्राचीन पवित्र गंभीरता कम हो गई। तब से स्त्रियों को अशिक्षिता और मूर्खा बनाकर हिन्दूजाति ने ताड़ने का अधिकारी समझ लिया तभी से हम लोग मूर्ख [illegible] मार-खाने वाले बन गए। यदि हम लोग स्त्रियों का सम्मान करना जानते होते, तो सब को नहीं ने मुसलमान [illegible] ने हिन्दू स्त्रियों का जो भीषण अपमान किया है, [illegible] न करने पाते। आर्यजाति की विधवा स्त्रियों [illegible] अथवा पुनर्विवाह का [illegible], विधवायें घरों में बैठी [illegible] सुनते सुनते-रो रोकर और [illegible] अपना जीवन बिताया करती हैं। जब तक हम [illegible] विधवा स्त्रियों को अनाथिनी और [illegible] समझेंगे [illegible] हम स्त्री जाति का पूरा सम्मान नहीं कर सकते, और जब तक हम अपनी स्त्री जाति का सम्मान करना नहीं सीखेंगे, तब तक हमारी आर्यजाति संसार में सुख से नहीं रह सकती। इसलिए प्रत्येक आर्य गृहस्थ का मुख्य कर्तव्य है कि आर्य जाति की स्त्रियों के सम्मान की रक्षा के लिए सदैव पूरे ध्यान से प्रबल प्रयत्न करे, क्योंकि इसी में आर्य जाति का जीवन है।

इस प्रकार लगभग ५० वर्ष की आयुतक मनुष्यों को गृहस्थाश्रम में रहना चाहिए। सन्ध्या हवन करना, वेदादि स्वाध्याय करते रहना, असहाय प्राणियों की रक्षा का प्रबन्ध करना, कुल के वृद्ध पुरुष यथा माता पिता चाचा बाबा आदि जब तक जीवित रहें तब तक बड़े प्रेम से और बड़ी श्रद्धा के साथ उनकी सेवा स्वयं करते रहना, और उन्हें किसी भी प्रकार का कोई भी छोटा सा भी कष्ट कभी न होने देना, और स्वयं उनकी सेवा करके सदैव उन्हें प्रसन्न रखना, तथा अभ्यागत विद्वान् सदाचारी वृद्ध संन्यासी महात्मा अतिथि लोगों का स्वागत सत्कार करना, यह पांच महायज्ञ हैं जो प्रत्येक गृहस्थाश्रमी को अवश्य करने चाहिए। आलस्य को छोड़कर बड़े प्रयत्न और लगन के साथ यथेष्ट धन गृहस्थाश्रमी को अवश्य कमाना चाहिए, और उससे अपने परिवार का सुख से पालन करते हुए गृहस्थाश्रम में बड़े आनन्द से रहना चाहिए।

वानप्रस्थ तथा संन्यास।

जब मनुष्य अपने बाल पकते हुए देखे और अपने पोतों को भी देख चुके तब उसे चाहिए कि गृहस्थाश्रम को छोड़कर वानप्रस्थाश्रम में चला जावे। यदि मनुष्य चाहे तो स्त्री आदि को भी अपने साथ रख सकता है और चाहे तो स्त्री की रक्षा का भार पुत्रों पर सौंप सकता है। परन्तु इस आश्रम में इतना आवश्यक नियम है कि बड़ी २ आबादी के शहरों में न रहकर स्वच्छ वायु के खुले स्थानों में निवास हो, और

पुत्रोत्पत्ति आदि गृहस्थाश्रम के कामों को छोड़कर, मनुष्य अपना अधिक समय स्वाध्याय-योगाभ्यास-प्राणायाम-विद्या-दान और लोकोपकार में लगावे। अपने पुत्रों को तथा अन्य जनता को अपनी ५०, ६०, वर्ष की आयु के अनुभवों से लाभ पहुँचावे। इसके पश्चात् जब भी सांसारिक वस्तुओं की कामना दिल से बिलकुल दूर हो जावे तब संन्यासी हो जावे। चारो वर्णों में जो भी कोई सदाचारी, विद्वान्, वैराग्य-सम्पन्न, और लोकोपकार करने की इच्छा रखते हों वह सब संन्यास आश्रम में आ सकते हैं। इस आश्रम में मनुष्य को चाहिए कि सब सांसारिक वासनाओं को छोड़कर तमाम जनता को अपना पुत्र और पुत्री समझे। अपनी लम्बी आयु के विशाल तजुर्बे से दुनियां को लाभ पहुँचावे। योगाभ्यास, प्राणायाम-तथा तमाम जनता को अपनी सन्तान समझ कर उन्हें अपने उपदेश आदि से लाभ पहुँचाना, यही संन्यासी का मुख्य धर्म है। परम पिता परमात्मा कृपा करें कि यह प्राचीन वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था फिर से आर्यजाति में और सम्पूर्ण संसार में फैल जावे।

पं० रामरतन द्विवेदी द्वारा स्वदेशी प्रेस कानपुर में मुद्रित
तथा रचयिताद्वारा प्रकाशित